शिक्षा किसलिए है?

आधुनिक शिक्षा की नींव के छह भ्रम, और उन्हें बदलने के लिए छह नए सिद्धांत

डेविड ओर

हम सीखने को अपने-आप में अच्छा मानने के आदी हैं. मगर जैसा पर्यावरण शिक्षक डेविड ओर बताते हैं, हमारी अब तक की शिक्षा ने एक तरह से एक दानव को पैदा किया है. यह निबंध उनके 1990 में अरकांसस कॉलेज के अंतिम वर्ष के विद्यार्थियों को दिए गए वक्तव्य में से लिया गया है. इसे सुनकर हमारे ऑफिस में कई लोगों को लगा कि ऐसे भाषण कॉलेज जीवन की शुरूआत के बजाय आखिर में क्यों कराए जाते हैं. डेविड ओर 'मीडोक्रीक प्रोजेक्ट' के संस्थापक हैं, जो फॉक्स, एरिज़ोना, में एक पर्यावरण शिक्षा केंद्र है, और वे ओहायो के ओबर्लिन कॉलेज में शिक्षक भी हैं.

अगर आज पृथ्वी का कोई आम दिन है, तो आज हम 116 वर्ग मील वर्षावन खो देंगे, यानी लगभग एक एकड़ प्रति सेकंड. इंसानों के कुप्रबंधन और अत्यधिक जनसंख्या के कारण बढ़ते हुए रेगिस्तानों के सामने 72 वर्ग मील वन और ख़त्म हो जाएंगे. आज हम 40 से 100 प्रजातियां खो देंगे, और कोई नहीं जानता है कि यह संख्या 40 है या 100. आज इंसानों की आबादी में 2,50,000 लोग और जुड़ जाएंगे. और आज हम 2,700 टन क्लोरोफ्लोरोकार्बन और डेढ़ करोड़ टन कार्बन वायुमंडल में डाल देंगे. आज रात पृथ्वी थोड़ी और गर्म हो जाएगी, इसका पानी थोड़ा और अम्लीय हो जाएगा, और जीवन का ताना-बाना थोड़ा और उधड़ जाएगा.

सच तो यह है कि ऐसी अधिकांश चीजें गंभीर खतरे में हैं जिन पर आपके भविष्य का स्वास्थ्य और सम्पन्नता टिके हैं: पर्यावरणीय स्थिरता, प्राकृतिक तंत्रों की सहनशीलता और उत्पादकता, प्राकृतिक जगत की सुन्दरता, और जैव विविधता.

ध्यान देने लायक बात यह है कि यह सब कुछ अनपढ़ अज्ञानी लोगों का करा-धरा नहीं है. यह अधिकांशतः B.A., B.Sक., L.L.B., M.B.A. जैसी ऊंची डिग्रियों वाले लोगों की करतूतों का परिणाम है. पिछले साल मॉस्को के ग्लोबल फोरम में एली वीसल ने ऐसा ही कुछ कहा था, जब उन्होंने कहा कि नाज़ी होलोकॉस्ट की क्रूरता के योजनाकार और कर्ता-धर्ता, इमैनुएल कांट और योहान गेटे जैसे विद्वानों के वारिस थे. कई मामलों में जर्मन लोग दुनिया के सबसे ज्यादा पढ़े-लिखे लोगों में से थे, मगर उनकी शिक्षा उनकी बर्बरता को रोकने में नाकामयाब रही. उनकी शिक्षा के साथ क्या गड़बड़ हुई? वीसल के शब्दों में, उनकी शिक्षा में "मूल्यों के बजाय सिद्धांतों की ज्यादा अहमियत थी, मनुष्यों के बजाय अवधारणाओं की, प्रश्नों के बजाय उत्तरों की, और विवेक के बजाय विचारधारा और कार्यक्षमता की."

हम कह सकते हैं कि प्राकृतिक जगत के बारे में हमारी शिक्षा ने हमें भी ऐसा ही सोचने का आदी बनाया है. यह कोई मामूली बात नहीं है कि इस ग्रह पर लम्बे समय तक सामंजस्य और स्थिरता से रहने वाले लोग पढ़ नहीं सकते थे, या कम-से-कम पढ़ने की हवस नहीं रखते थे. मेरा कहने का तात्पर्य इतना है कि शिक्षा अपने आप में सभ्यता, बुद्धिमता या विवेक नहीं देती है. इसी तरह की शिक्षा जारी रखने से हमारी समस्याएं बढ़ने वाली ही हैं. मैं अज्ञानता की वकालत नहीं कर रहा हूं, बल्कि यह कह रहा हूं कि अब हमें शिक्षा का मोल सभ्य समाज के निर्माण और मनुष्यों के बचे रहने के पैमानों पर नापना होगा- 1990 और इसके बाद के दशकों में हमारे सामने मौजूद ये दो सबसे बड़े मुद्दे हैं.

सही साधन, वहशी उद्देश्य

आधुनिक संस्कृति और शिक्षा के साथ क्या गड़बड़ हुई? साहित्य में कुछ उत्तर मिलता है: क्रिस्टफर मार्लो का फॉस्ट, जो ज्ञान और शक्ति पाने के लिए अपनी आत्मा बेच देता है; मैरी शेली का डॉक्टर फ्रेंकेंस्टाइन, जो अपने सृजन की

जिम्मेदारी लेने से इनकार कर देता है; हर्मन मेलविल का कैप्टेन अहाब जो कहता है “मेरे सारे साधन सही हैं, मेरी मंशा और उद्देश्य वहशी हैं”. इन पात्रों में हमें आधुनिक समाज की प्रकृति को जीत लेने की उन्मादी हवस दिखती है.

ऐतिहासिक रूप से, फ्रांसिस बेकन ने ज्ञान और शक्ति का जो समागम सुझाया था वह आज की सरकारों, उद्योगों और ज्ञान की मिलीभगत का पूर्व-सूचक था जिसकी वजह से इतना विनाश हुआ है. गैलिलीयो का बुद्धिमता को ऊंचा स्थान दिलाना विश्लेषक दिमाग का रचनात्मकता, हास्य और आतंरिक पूर्णता पर हावी होने का पूर्व-सूचक था. और देकार्ते की ज्ञानमीमांसा में स्वयं और वस्तु के जबरदस्त अलगाव की जड़ें दिखती हैं. इन तीनों ने मिलकर आधुनिक शिक्षा की नींव रखी, ऐसी नींव जो उन भ्रमों का हिस्सा बन चुकी है जिन्हें हम बिना सवाल किए स्वीकार कर चुके हैं. मैं ऐसे छह भ्रम बताऊंगा.

पहला भ्रम यह है कि ***अज्ञानता की समस्या सुलझाई जा सकती है.*** अज्ञानता की समस्या सुलझाई *नहीं* जा सकती है, बल्कि यह मानवीय अस्तित्व का अभिन्न अंग है. ज्ञान की बढ़ोतरी अपने साथ हमेशा किसी दूसरे तरह की अज्ञानता भी बढ़ाती है. 1930 में जब टॉमस मिज्ले जूनियर ने CFC की खोज की, तो अब तक जो सिर्फ एक मामूली अज्ञानता थी अब वह मनुष्य की जीवमंडल (biosphere) के बारे में समझ की एक बेहद गंभीर और घातक कमी के रूप में उभरी. 1970 की शुरूआत तक किसी ने भी यह नहीं सोचा था कि “यह पदार्थ किस चीज को कैसे प्रभावित करता है?” और 1990 तक CFC से वैश्विक स्तर पर ओजोन परत पतली हो चुकी थी. CFC की खोज की वजह से हमारा ज्ञान बढ़ा; मगर एक फैलते हुए वृत्त की परिधि की तरह हमारी अज्ञानता भी बढ़ी.

दूसरा भ्रम यह है कि ***पर्याप्त ज्ञान और टेक्नोलॉजी के साथ हम पृथ्वी का प्रबंधन कर सकते हैं.*** “पृथ्वी का प्रबंधन करना” सुनने में बहुत अच्छा लगता है. यह हमारे कंप्यूटर, बटनों और गैजेटों के प्रति आकर्षण को बढ़ाता है. मगर पृथ्वी और इसके जैविक तंत्रों की जटिलता का कभी भी सुरक्षित प्रबंधन नहीं किया जा सकता है. हमें न तो अभी ऊपरी मिट्टी के सबसे ऊपरी इंच की पारिस्थिकी (ecology) के बारे में ही ज्यादा कुछ पता है, और न ही जीवमंडल के विशाल तंत्रों के साथ इसके सम्बन्ध के बारे में.

अगर किसी चीज का प्रबंधन किया जा सकता है तो वह *हम* हैं: मानवीय इच्छाएं, आर्थिकी, राजनीति, और समुदाय. मगर राजनीति, नैतिकता, और व्यावहारिक बुद्धि जो कठिन विकल्प सुझाते हैं, हम उनसे आंखें चुराते रहते हैं. यह कहीं ज्यादा बुद्धिमता भरा है कि हम खुद को एक सीमित ग्रह के अनुरूप ढाल लें, बजाय कि इस ग्रह को अपनी असीमित इच्छाओं के अनुरूप बदलें.

तीसरा भ्रम यह है कि ***ज्ञान बढ़ रहा है और इसके साथ मानवीय अच्छाई भी बढ़ रही है.*** अभी एक सूचना क्रान्ति हो रही है, जिससे मेरा तात्पर्य है डाटा, शब्द, कागज़ से. मगर इस सूचना क्रान्ति को ज्ञान या विवेक की क्रान्ति मानना बेवकूफी होगा जिसे इतनी आसानी से नापा नहीं जा सकता है. सच तो यह है कि कुछ प्रकार का ज्ञान बढ़ रहा है और दूसरे प्रकार का ज्ञान खो रहा है. डेविड एहरन्फील्ड ने बताया है कि जीव विज्ञान विभाग अब वर्गीकरण-विज्ञान (taxonomy) और पक्षी-विज्ञान में नए लोगों को नहीं ले रहा है. यानी मॉलिक्यूलर बायोलॉजी और जेनेटिक इंजीनियरिंग, जो आकर्षक हैं मगर ज्यादा जरूरी नहीं, उन पर अत्यधिक जोर के कारण दूसरे तरह का महत्वपूर्ण ज्ञान खो रहा है. हमारे पास अभी भी भूमि स्वास्थ्य सम्बन्धी जरूरी विज्ञान नहीं है, जिसका आह्वान अल्डो लियोपोल्ड ने आधी सदी पहले किया था.

हम केवल कुछ ही क्षेत्रों में ज्ञान नहीं खो रहे हैं, बल्कि समुदायों का पारंपरिक ज्ञान भी खो रहे हैं. बैरी लोपेज़ के शब्दों में:

“मैं यह निष्कर्ष निकालने के लिए बाध्य हूं कि अगर खतरनाक नहीं तो कुछ अजीब जरूर हो रहा है. साल-दर-साल जमीनी अनुभव रखने वाले लोगों की संख्या घट रही है. ग्रामीण लोग शहर पलायन कर रहे हैं… यह व्यक्त कर पाना मुश्किल है, पर व्यक्तिगत और स्थानीय ज्ञान के पतन के इस दौर में, वह ज्ञान जिस पर

वास्तविक समुदाय टिका होता है और जिस पर आखिरकार एक देश को खड़ा होना होता है, बहुत खतरनाक और असहज होता जा रहा है."

सूचना और ज्ञान की इस भ्रान्ति में एक गहरी भूल छुपी हुई है, जो यह है कि ज्यादा सीखने से हम बेहतर इंसान बन जाएंगे. मगर सीखना, जैसा लोरेन ईज़्ली ने एक बार कहा था, अंतहीन है और "यह अपने-आप हमें ज्यादा नैतिक इंसान नहीं बना पाएगा." आखिर में, बाकी सभी क्षेत्रों में हमारे विकास के कारण सबसे ज्यादा खतरा अच्छाई की हमारी समझ को है. सभी चीजों को मद्देनजर रखते हुए यह संभव है कि हम लोग ऐसी चीजों के बारे में अज्ञानी होते जा रहे हैं जो पृथ्वी पर सामंजस्य और स्थिरता से जीने के लिए जरूरी हैं.

उच्च शिक्षा का चौथा भ्रम है कि ***हम जो कुछ भी बिगाड़ चुके हैं उसे फिर से पर्याप्त रूप से बहाल किया जा सकता है.*** आधुनिक पाठ्यक्रम में हमने प्रकृति को अलग-अलग अकादमिक विशेषज्ञताओं के टुकड़ों में बांट दिया है. इसलिए 12, 16 या 20 साल की शिक्षा के बाद अधिकतर छात्र सभी चीजों की परस्पर एकता की मोटी-मोटी समझ बनाए बिना ही स्नातक हो जाते हैं. उनके व्यक्तित्व और इस ग्रह के लिए इसके बहुत भीषण परिणाम होते हैं. उदहारण के लिए, हम लगातार ऐसे अर्थशास्त्री पैदा करते हैं जिन्हें पारिस्थिकी की बुनियादी जानकारी भी नहीं होती है. इससे पता चलता है कि क्यों हमारे राष्ट्रीय आर्थिक लेखा-जोखा तंत्र में सकल राष्ट्रीय उत्पाद (gross national product-GNP) से जैविक क्षति, भू-क्षरण, वायु-जल प्रदूषण, और संसाधनों का दोहन घटाया नहीं जाता है. हम 25 किलोग्राम गेहूं की कीमत तो GNP में जोड़ते हैं, लेकिन उसको उगाने में जो 75 -किलोग्राम मिट्टी की ऊपरी परत नष्ट हुई है उसे घटाना भूल जाते हैं. ऐसी अपूर्ण शिक्षा के कारण हमें लगता है कि हम दिन-ब-दिन संपन्न होते जा रहे हैं.

पांचवा भ्रम यह है कि ***शिक्षा का उद्देश्य आपको समाज में अपनी हैसियत ऊपर उठाना और सफल होने के औजार देना है.*** टॉमस मर्टन ने कहा था कि यह "ऐसे लोगों का व्यापक उत्पादन है जो कुछ भी करने लायक नहीं है, सिवाय एक विस्तृत और पूर्ण रूप से कृत्रिम ढोंग में भाग लेने के". जब मर्टन से उनकी सफलता के बारे में लिखने को कहा गया, तो उन्होंने उत्तर दिया "अगर मैंने कभी कोई सुप्रसिद्ध पुस्तक लिखी तो यह एक दुर्घटना मात्र थी, मेरी लापरवाही और अबोधता के कारण, और मैं बहुत ध्यान रखूंगा कि ऐसी गलती दोबारा न हो." छात्रों को उनकी सलाह थी "तुम जो बनना चाहते हो बनो, पागल, शराबी, हर किस्म का लफंगा, मगर एक चीज से हर कीमत पर दूर रहना: सफलता".

सीधी सी बात यह है कि इस ग्रह को ज्यादा 'सफल' लोग नहीं चाहिए. मगर इसे शांतिदूतों, जख्म भरने वालों, पुनर्वास करने वालों, कहानियां सुनाने वालों, और हर किस्म के आशिकों की जरूरत है. इसे जरूरत है ऐसे लोगों कि जो जहां भी रहते हैं अच्छे से रहना जानते हैं. इसे नैतिक साहस वाले ऐसे लोगों की जरूरत है जो इस दुनिया को मानवीय और रहने लायक बनाने की लड़ाई में हिस्सा लेने को राजी हैं. और ये सारी चीजें उस सब से कोसों दूर हैं जिसे हमारी संस्कृति 'सफलता' मानती है.

आखिर में, हमें भ्रम है कि ***हमारी संस्कृति मानवीय उपलब्धि का चरम बिंदु है.*** केवल हम ही आधुनिक, तकनीक-विज्ञ, और विकसित हैं. जाहिर है कि यह सांस्कृतिक घमंड का सबसे घटिया स्वरूप है, और साथ ही इतिहास और मानव-शास्त्र की गलत समझ भी. हाल ही में इस घमंड ने नया रूप ले लिया है- 'हमने शीत युद्ध जीत लिया है और पूंजीवाद ने साम्यवाद को पूर्ण रूप से हरा दिया है'. साम्यवाद इसलिए असफल हुआ क्योंकि वह बहुत अधिक कीमत पर बहुत कम उत्पादन करता था. मगर पूंजीवाद भी असफल ही है, क्योंकि यह यह बहुत ज्यादा उत्पादन करता है, बहुत कम बांटता है, और हमारे बच्चों और पोते-पोतियों की पीढ़ियों से बहुत बड़ी कीमत वसूलता है. साम्यवाद इसलिए असफल हुआ क्योंकि इसमें अभाव की नैतिकता थी. पूंजीवाद इसलिए असफल हुआ क्योंकि यह नैतिकता को ही समाप्त कर देता है. यह वह हसीन दुनिया नहीं है जो गैर-जिम्मेदार विज्ञापन निर्माता या राजनेता हमें दिखाते हैं. हमने एक ऐसी दुनिया बनाई है जहां मुट्ठी भर लोगों के पास अकूत संपत्ति है और बढ़ती हुई गरीब आबादी के पास भीषण विपन्नता है. अपने सबसे वीभत्स रूप में यह दुनिया गलियों में पसरे नशे, अतृप्त हिंसा,

अनैतिकता और सबसे विकराल तरह की गरीबी से भरी हुई है. सच तो यह है कि हम एक बिखरती हुई संस्कृति में जी रहे हैं. 'होलिस्टिक रिव्यु' के संपादक रॉन मिलर के शब्दों में:

"हमारी संस्कृति मनुष्यों की अच्छाई और उत्कृष्टता का पोषण नहीं करती है. यह दूरदर्शिता, कल्पनाशीलता, सौन्दर्यबोध या आध्यात्मिक संवेदना विकसित नहीं करती है. यह कोमलता, उदारता, दूसरों का ख्याल रखना और करुणा प्रोत्साहित नहीं करती है. बीसवीं सदी का अंत आते-आते आर्थिक-तकनीकी-सांख्यिकीवादी नजरिया बड़ी क्रूरता से इंसानों में वह सब कुछ नष्ट कर रहा है जो प्रेमपूर्ण और जीवनदायी है."

शिक्षा किसलिए होनी चाहिए

इंसानी जीवन संजोए रखने के उद्देश्य से, हम शिक्षा पर पुनर्विचार कैसे कर सकते हैं? मैं छह सिद्धांत सुझा रहा हूं:

पहला, ***सारी शिक्षा पार्यावरण शिक्षा है.*** हम शिक्षा में क्या शामिल करते हैं और क्या नहीं, इससे हम छात्रों को यह सिखाते हैं कि वे प्राकृतिक जगत हिस्सा हैं या उससे अलग. उदहारण के लिए, ऊष्मागतिकी (thermodynamics) या पारिस्थिकी के नियमों को सिखाए बिना अर्थशास्त्र पढ़ाने से छात्रों को एक महत्वपूर्ण बुनियादी सीख मिलती है: कि भौतिकी और पारिस्थिकी का अर्थव्यवस्था से कोई लेना-देना नहीं है. यह साफ़ तौर पर गलत है. यही बात पाठ्यक्रम के अन्य विषयों पर भी लागू होती है.

दूसरा सिद्धांत ग्रीक अवधारणा *पाइडेआ* (paideia) से आता है. ***शिक्षा का उद्देश्य विषय-वस्तु पर नहीं बल्कि स्वयं पर महारत पाना है.*** विषय-सामग्री तो साधन मात्र है. जिस तरह हथौड़ी और छेनी से कोई व्यक्ति पत्थर या लकड़ी को आकार देता है, उसी तरह विचारों और ज्ञान को हम अपना चरित्र ढालने के लिए इस्तेमाल करते हैं. ज्यादातर समय हम साधन और साध्य में भ्रमित रहते हैं, और यह सोचते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ छात्र के मस्तिष्क में हर तरह के तथ्य, सूचना, पद्धतियां, तरीके ठूंसना है, भले ही इनका इस्तेमाल किसी भी उद्देश्य के लिए किया जाए. ग्रीक इस बारे में बेहतर समझ रखते थे.

तीसरा, ***ज्ञान अपने साथ यह जिम्मेदारी भी लेकर चलता है कि संसार में उसका उपयोग भले उद्देश्यों के लिए किया जाए.*** आज किए जाने वाले अधिकांश शोध मैरी शेली के उपन्यास जैसे हैं: तकनीक-जनित दानव जिनके लिए कोई जिम्मेदारी नहीं लेता है और न किसी से जिम्मेदारी लेने की उम्मीद की जाती है. लव कैनाल किसकी जिम्मेदारी है? चर्नोबिल? ओजोन का क्षरण? वैल्डेज़ तेल रिसाव? इनमें से हर त्रासदी इसलिए संभव हुई क्योंकि ऐसे ज्ञान का सृजन किया गया था जिसके लिए आखिरकार कोई भी जिम्मेदार नहीं था. अंततः इन्हें 'बड़े पैमाने के उत्पादन से उपजी स्वाभाविक समस्या' की नज़रों से देखा जाएगा. बेहद विशाल और जोखिम भरी परियोजनाओं को करने का ज्ञान हमारा उन्हें जिम्मेदारी से क्रियान्वित करने की क्षमता को पछाड़ चुका है. इसमें कुछ ज्ञान तो ऐसा है जो जिम्मेदारी से इस्तेमाल किया ही नहीं जा सकता है, यानी उसे सुरक्षित तरीके से और निरंतर भले उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है.

चौथा, ***हम तब तक यह नहीं कह सकते हैं कि हम कुछ समझते हैं, जब तक हम उसका वास्तविक इंसानों और उनके समुदायों पर पड़ने वाले प्रभावों को नहीं समझते हैं.*** मैं ओहायो के यंग्सटाउन शहर के नज़दीक बड़ा हुआ, जिसे मुख्य रूप से उद्योगों द्वारा उस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में निवेश न करने के निर्णय ने तबाह कर दिया. खरीद-बिक्री, कर छूट, पूंजी संचलन के दांव-पेंच में पारंगत MBA पढ़े लोगों ने वह कर दिखाया जो कोई आक्रमणकारी सेना भी नहीं कर सकती थी: उन्होंने अपने मुनाफे की 'बॉटम लाइन' के खातिर एक अमरीकी शहर को पूरी कानूनी छूट के साथ तबाह कर दिया. मगर एक समुदाय को इस बॉटम लाइन की दूसरी कीमतें चुकानी पड़ती हैं, बेरोज़गारी, अपराध, बढ़ते तलाक, नशाखोरी, बाल उत्पीड़न, गवांई हुई बचत, और बर्बाद जिंदगियां. इस वाकए में हम देख सकते हैं कि प्रबंधन कॉलेजों और अर्थशास्त्र विभागों ने इन छात्रों को जो सिखाया, उसमें अच्छे मानव समुदायों का मूल्य

पहचानना शामिल नहीं था, और न ही कार्यक्षमता और अमूर्त आर्थिक अवधारणाओं को इंसानों और समुदायों से ज्यादा अहमियत देने वाली संकीर्ण आर्थिक नीति से उपजने वाली मानवीय त्रासदी की कीमत पहचानना.

मेरा पांचवा सिद्धांत विलियम ब्लेक से प्रेरित है. यह है ***बारीकियों पर ध्यान देना और शब्दों के बजाय कर्म से उदहारण पेश करना.*** छात्रों को वैश्विक जिम्मेदारी के पाठ पढ़ाए जाते हैं, जबकि उनके संस्थान खुद बहुत गैर जिम्मेदाराना चीजों में निवेश करते हैं. जाहिर है कि वास्तविकता में इससे छात्रों को पाखण्ड और अंततः निराशा का पाठ पढ़ाया जाता है. बिना किसी के बताए छात्र यह जान जाते हैं कि वे आदर्शों और यथार्थ के बीच की गहरी खाई पाट पाने में असहाय हैं. ऐसे शिक्षकों और प्रबंधकों की बेहद जरूरत है जो सत्यनिष्ठा, विवेक व संरक्षण का आदर्श प्रस्तुत करें *और* ऐसी संस्थानों की भी जो अपने हर कार्य में इन आदर्शों को जीएं.

आखिर में, ***सीखने की प्रक्रिया भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी विषय-वस्तु.*** सीखने की प्रक्रिया बहुत मायने रखती है. व्याख्यान की शैली में पढ़ाए गए विषयों से निष्क्रियता पैदा होती है. बंद कमरों में पढ़ते रहने से यह भ्रम पैदा होता है कि सीखना केवल चहारदीवारी के अन्दर होता है, उस संसार से कटकर जिसे हास्यास्पद तरीके से छात्र “वास्तविक दुनिया” कहते हैं. मेंढक का डाइसेक्शन करने से छात्र वह सीखता है जो कितने भी शब्द कहकर नहीं सिखाया जा सकता है. संस्थानों की बनावट भी अक्सर निष्क्रियता, संवाद-शून्यता, दमन और कृत्रिमता का भाव उपजती है. मेरा तात्पर्य है कि छात्र विषय-वस्तु के अलावा भी कई सारी चीजों से सीखते हैं.

आपके संस्थान के लिए एक असाइनमेंट

अगर शिक्षा को सामंजस्य और स्थिरता के पैमानों पर नापा जाए, तो क्या किया जा सकता है? सबसे पहले मैं यह प्रस्ताव रखना चाहुंगा कि आप परिसर-स्तर पर एक संवाद शुरू करें कि आप शिक्षक के रूप में अपना काम किस तरह से कर रहे हैं. क्या आपके संस्थान में चार साल बिताने के बाद आपके छात्र बेहतर वैश्विक नागरिक बन रहे हैं या वे, वेन्डेल बेरी के शब्दों में, “पेशेवर घुमंतू गुंडे” बन रहे हैं? क्या यह कॉलेज एक स्थिर क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था विकसित करने में योगदान दे रहा है, या कार्यक्षमता बढ़ाने के नाम पर विनाश के चक्र बढ़ा रहा है?

मेरा दूसरा प्रस्ताव है कि आप इस परिसर में संसाधनों के प्रवाह का निरीक्षण कीजिए: भोजन, ऊर्जा, पानी, सामान, और कचरा. शिक्षक और छात्र साथ-साथ उन कुंओं, खदानों, खेतों, गोदामों, पशुबाड़ों, और जंगलों का अध्ययन करें जहां से परिसर में सामान आता है और उन जगहों का भी जहां यहां से कचरा भेजा जाता है. सामूहिक रूप से प्रयास कीजिए कि इस संस्थान की खरीद कैसे उन विकल्पों से की जाए जो पर्यावरण को कम नुकसान पहुंचाते हैं, कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन कम करते हैं, जहरीले पदार्थों का कम उपयोग करते हैं, ऊर्जा का बेहतर इस्तेमाल करते हैं व सौर ऊर्जा उपयोग में लाते हैं, स्थिर क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था विकसित करने में योगदान देते हैं, दीर्घकालीन लागत कम करते हैं, और दूसरे संस्थानों के लिए उदाहरण पेश करते हैं. फिर इन अध्ययनों की खोजों को पाठ्यक्रम में अलग-अलग विषयों, सेमिनारों, व्याख्यानों, और शोधों में शामिल करें. कोई भी छात्र यहां से न निकले जिसे संसाधनों के प्रवाह का विश्लेषण करना न आता हो और जिसने वास्तविक समस्याओं के वास्तविक समाधान खोजने में हिस्सा न लिया हो.

तीसरा, पुनर्विश्लेषण करें कि आपका संस्थान अपना पैसा कहां लगा रहा है. क्या आपका निवेश वैल्डेज़ के सिद्धांतों के अनुसार हो रहा है? क्या यह उन कंपनियों में लग रहा है जो ऐसे काम कर रही हैं जिनकी दुनिया को वाकई जरूरत है? क्या इसका कुछ हिस्सा स्थानीय तौर पर निवेश किया जा सकता है ताकि इस पूरे क्षेत्र में ऊर्जा का बेहतर इस्तेमाल और स्थिर अर्थव्यवस्था विकसित हो सकें?

आखिर में, मैं सलाह दूंगा कि आप अपने सभी छात्रों के लिए पर्यावरण साक्षरता के लक्ष्य निर्धारित करें. इस या किसी भी अन्य संस्थान से एक भी छात्र ऐसा नहीं निकलना चाहिए जिसे इन चीजों की बुनियादी समझ न हो:

- ऊष्मागतिकी के नियम

- पारिस्थिकी के बुनियादी नियम
- किसी तंत्र की वहनक्षमता (carrying capacity)
- भौतिक, रासायनिक और जैविक तंत्रों के ऊर्जा सम्बन्ध और परिवर्तन (energetics)
- न्यूनतम लागत और अंतिम-उपयोग (end–use) विश्लेषण
- किसी स्थान में अच्छे से रहना
- टेक्नोलॉजी की सीमाएं
- उचित स्तर पर उत्पादन और विस्तार (appropriate scale)
- सामंजस्यपूर्ण कृषि और वानिकी
- स्थिर-स्तर अर्थशास्त्र (steady-state economics), जिसमें उत्पादन के हर कदम पर ऊर्जा और सामान के न्यूनतम उपयोग के जरिए संसाधनों और जनसख्या को एक स्थिर स्तर पर सीमित रखा जाता है
- पर्यावरण सम्बन्धी नैतिकता

क्या इस संस्थान के स्नातक यह समझते हैं, जैसा अल्डो लियोपोल्ड ने कहा था, कि ***"वे एक विशाल पारिस्थिकी तंत्र का छोटा सा हिस्सा भर हैं; अगर वे इस तंत्र के साथ काम करेंगे तो वे अपनी मानसिक और भौतिक सम्पदा में असीमित बढ़ोतरी कर पाएंगे, और अगर वे इसके खिलाफ जाएंगे तो यह तंत्र उन्हें कुचल डालेगा"?*** लियोपोल्ड ने पूछा था, ***"अगर शिक्षा हमें ये चीजें नहीं सिखाती, तो फिर शिक्षा किसलिए है?"***

(अनुवाद: आशुतोष भाकुनी)